Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

नागार्जुन की कविताएँ : जीवन की विराटता का आख्यान

आकाश कुमार

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, दाउदनगर कॉलेज, (मगध विश्वविद्यालय) दाउदनगर, औरंगाबाद, बिहार।

Article Info
Volume 4, Issue 6
Page Number : 126-130

Publication Issue :
November-December-2021

Article History
Received : 15 Nov 2021
Published : 30 Nov 2021

शोध सार : नागार्जुन आधुनिक हिंदी कविता के सर्वाधिक लोकप्रिय कवियों में से हैं। लोक में उनकी जितनी पूछ है, अकादमिक जगत में उससे कम नहीं है। जन सामान्य से जुड़ते हुए उनकी संवेदना को पकड़कर कविता लिखने वाले विरले कवि हैं नागार्जुन। उनकी कविताएँ नारे की शक्ल में भी हैं और काव्य सौन्दर्य के पैमानों पर खरा उतरने वाली भी। मजदूरों की फटी बिवाइयों पर भी उन्होंने कविता लिखी है और नभ में गहराते बादलों पर भी। सत्ता के दमन के खिलाफ आक्रोश में लिखी गयी उनकी कविताएँ भी हैं और फुर्सत के क्षणों में पके हुए कटहल हो देखकर पुलकित होते मन से भी उन्होंने कविताएँ लिखी हैं। शायद ही जीवन का कोई कोना हो जो उनकी नज़रों से बच पाया हो। इस पत्र में नागार्जुन के काव्य लोक के इन्हीं विविध पहलुओं की पड़ताल की गयी है।

बीज शब्द : नागार्जुन, जनकवि, राजनीति, सर्वहारा, जीवन, सौन्दर्य।

नागार्जुन की कविताओं को पढ़कर सबसे पहले जो धारणा बनती है वह यह है कि वे ठीक अर्थों में एक जनकवि हैं। उनकी चिंता के केंद्र में हमेशा समाज का निम्न और कमजोर तबका बना रहता है। उनकी कविताएँ रूप और अंतर्वस्तु दोनों की दृष्टि से हमेशा हाशिये के लोगों के पक्ष में खड़ी नज़र आती हैं। वरिष्ठ आलोचक रामविलास शर्मा ने उनके बारे में बिलकुल ठीक लिखा है कि, "नागार्जुन जितने क्रांतिकारी सचेत रूप से हैं, उतने ही अचेत रूप से भी हैं।"[i] यह कथन नागार्जुन के जनवादी स्वाभाव को बिल्कुल ठीक परिभाषित करता है। नागार्जुन की रचनाओं में मौजूद जनवादी चेतना आरोपित नहीं है बल्कि यह उनके स्वभाव का हिस्सा है जो उनकी कविताओं में खुद–ब–खुद उतरता चला जाता है। उनका चिंतन, उनकी वैचारिकी सब उनकी कविताओं को प्रभावित करते हैं। इसीलिए वे फटी बिवाइयाँ लिए रिक्शेवाले, ट्राम में कुलियों–मजदूरों पर उन्हीं की भाषा में कविता लिख पाते हैं।

नागार्जुन की यह जनवादी दृष्टि उनकी कविता में बार–बार नज़र आती है। वे अपने आपको उन्हीं किसान – मजदूरों से जोड़ कर देखते हैं और स्वयं को उनके बीच का पाते हैं। इसीलिए समाज के संभ्रांत वर्ग को देखने की उनकी दृष्टि भी सर्वहारा की चेतना से निर्मित होती है। ट्राम में कुली–मजदूरों के बीच फंसे किसी भद्रजन को वे संबोधित करते हुए लिखते हैं –

"छूती है निगाहों को / कत्थई दांतों की मुस्कान / बेतरतीब मूछों की थिरकन /
सच सच बताओ / घिन तो नहीं आती है ? / जी तो नहीं कुढ़ता है ?..."[ii]

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

नागार्जुन अपने आपको ऐसे ही मजदूरों के बीच का पाते हैं। इसीलिए ऐसी व्यंग्यात्मक कविता लिख पाते हैं और पान खाए दांतों पर 'कत्थई दांतों की मुस्कान' जैसा पद रच देते हैं। आलोचक रामविलास शर्मा ने भाषा के स्तर पर भी नागार्जुन की कविताओं में इसी जनवादी तेवर की पहचान की है। वे मानते हैं कि नागार्जुन ने अपनी कविताओं की भाषा के कारण राजनीतिक रूप से जागृत श्रमिकों को एक-दूसरे के निकट लाने का काम किया है।[iii] नागार्जुन ने अपनी मातृभाषा संस्कृत में भी कविताएँ लिखी हैं और मैथिली में भी, लेकिन खड़ी बोली में उन्होंने सबसे ज्यादा लेखन किया है। खड़ी बोली में की गयी उनकी रचनाएँ भी भाषा के स्तर पर अपने कई समकालीनों से अलग हैं। अत्यंत सरल और सहज शब्दावली में लिखी गयी उनकी कविताएँ सम्प्रेषण के स्तर पर भी जनवादी बने रहने की कोशिश करती हैं।

नागार्जुन जनवादी परंपरा के कवि हैं, मार्क्सवाद उनकी रचनाओं में झलकता है। लेकिन वे राजनीतिक रूप से संस्थाबद्ध या विचारबद्ध मार्क्सवादी नहीं हैं। सर्वहारा के हित में वे मार्क्सवादी शक्तियों के खिलाफ जाने का साहस भी रखते हैं। ऐसा इसलिए है कि वे मार्क्सवाद को जीने वाले कवि हैं उसका प्रदर्शन करने वाले नहीं। वे मार्क्सवादी सिद्धांतों पर कुछ जगह कमजोर नज़र आ सकते हैं लेकिन सर्वहारा के प्रति उनकी प्रतिबद्धता में कोई कमी नहीं आती।

नागार्जुन ने दो तरह की कविताएँ लिखी हैं। एक तो वे कविताएँ हैं जिन्हें 'तात्कालिक' या 'प्रचार' की कविता कहा गया है और दूसरी वे जिन्हें आलोचनात्मक मानदंडों पर गंभीर किस्म की कविता माना जाता है। यानि प्रेम, सौन्दर्य, करुणा आदि भावों से जुड़ी काव्य के शिल्प पर खरा उतरने वाली कविताएँ। अगर इन दोनों तरह की कविताओं को सामने रखकर देखा जाये तो लगेगा ही नहीं कि एक ही व्यक्ति ने इन्हें लिखा है। उदाहरण के लिए आपातकाल के समय इंदिरा गाँधी के विरोध में लिखी गयी उनकी ये कविता देखें –

इन्दु जी, इन्दु जी, क्या हुआ आपको?
बेटे को तार दिया, बोर दिया बाप को!..
छात्रों के लहू का चस्का लगा आपको
काले चिकने माल का मस्का लगा आपको
किसी ने टोका तो ठस्का लगा आपको।[iv]

इसी के साथ उनकी यह कविता 'बादल को घिरते देखा है' भी देखें –

अमल धवल गिरी के शिखरों पर
बादल को घिरते देखा है।
छोटे-छोटे मोती जैसे
उसके शीतल तुहिन कणों को,
मानसरोवर के उन स्वर्णिम
कमलों पर गिरते देखा है।[v]

वस्तुत: इन संपूर्ण कविताओं के परिप्रेक्ष्य में नागार्जुन का मूल्यांकन किये जाने की जरूरत है। कवि नागार्जुन का चरित्र इस सभी कविताओं से मिलकर बनता है। ये तात्कालिक कविताएँ जो किसी न किसी घटना से प्रेरित होकर लिखी गयी हैं, आमतौर पर आलोचकों द्वारा अगंभीर मानी जाती हैं। परंतु आलोचना के मानदंडों को यही कविताएँ सबसे ज्यादा झकझोरती हैं और चुनौती देती हैं। नागार्जुन की ऐसी ही 'तात्कालिक' कविताएँ पाठकों में सबसे ज्यादा लोकप्रिय हैं। और

यही उनके जनवादी कवि होने का प्रमाण हैं। वरिष्ठ कवि केदारनाथ सिंह नागार्जुन की इन लोकप्रिय और 'तात्कालिक' कविताओं के संबंध में लिखते हैं, "तात्कालिक विषय पर कविता लिखना एक खतरनाक काम है। ... यह खतरा वहाँ हमेशा मौजूद रहता है कि कविता कविता रह ही न जाये! पर नागार्जुन एक रचनाकार की पूरी जिम्मेदारी के साथ इस खतरे का सामना करते हैं और इस दृष्टि से देखें तो उनमें खतरनाक ढंग से कवि होने का साहस है।"[vi] नागार्जुन की तात्कालिक विषयों पर लिखी गयी ऐसी कविताएँ जिन्हें अगंभीर समझने की भूल की जाती रही वे अपने कई अर्थों में बेहद गंभीर कविताएँ हैं। अव्वल तो ये कविताएँ गंभीर साहित्य की अवधारणा पर ही सवाल खड़े करती हैं। मानो पूछ रही हों जनता के साथ खड़े होकर व्यवस्था के खिलाफ आवाज़ बुलंद करना कैसे अगंभीर हो गया। नागार्जुन की इन कविताओं के संबंध में आलोचक अजय तिवारी लिखते हैं, "बाहर से सरल और सपाट नज़र आने वाली कविताएँ धारदार व्यंग्य के अंतस्सूत्र से बंधी हुई हैं। ऊपर से जो चीजें केवल तथ्यात्मक विवरण जान पड़ती हैं उन्हें भीतर से व्यंग्य के अंतस्सूत्र ने इस तरह बांध रखा है कि स्वप्न और वास्तविकता का अंतर्विरोध पूरी तरह उजागर होता है और वह कविता को कोरा भावास्फुटन या नारेबाजी होने से बचा लेता है।[vii] शासन की निरंकुशता के खिलाफ नागार्जुन ने जो कविताएँ लिखी हैं, उन सबमें यह बात मौजूद है। इन काव्य पंक्तियों पर पर नज़र डालें –

आओ रानी हम ढोएँगे पालकी

यही हुई है राय जवाहरलाल की।[viii]

इन दो पंक्तियों में जो पैना व्यंग्य छुपा है वह इस कविता को असाधारण बना देता है। जवाहरलाल नेहरु ब्रिटेन की महारानी के आतिथ्य पर लाखों खर्च कर रहे हैं। इस खर्च को देश की उस जनता को वहन करना है जिसके पास खाने को और पहनने को भी पूरा नहीं है। लेकिन देश की जनता इसके खिलाफ नहीं जा सकती, उसे यह भारी पालकी ढोनी ही होगी क्योंकि इस प्रजातंत्र के राजा प्रधानमंत्री नेहरू का यही निर्णय हुआ है।

लेकिन बहुत ही कविताएँ ऐसी भी हैं जहाँ उनकी दोनों तरह की काव्य शैली का सम्मिलन हुआ है। भाषाई और कलात्मक दृष्टि से उत्कृष्ट लेकिन जनपक्षधरता में भी उतनी ही शक्तिशाली। उदाहरंणस्वरूप उनकी एक कविता है 'शासन की बंदूक' जो सत्ता के अन्याय और दमन के विरुद्ध लिखी गयी है। इसकी ये पंक्तियाँ जो बेहद लोकप्रिय हैं –

खड़ी हो गयी चांपकर कंकालों की हूक

नभ में विपुल विराट सी शासन की बंदूक...[ix]

मृतकों की आहों का दमन करते हुए समूचे फलक पर सत्ता के अन्यायी स्वरूप का छा जाना एक भयावह दृश्य पैदा करता है। इन दो पंक्तियों द्वारा खींचा गया दृश्य काव्यात्मक दृष्टि से भी बेहद शक्तिशाली है। इसके बाद की पंक्तियाँ इससे भी लाजवाब हैं जिसमें उन्होंने सत्ता की लाचारी को दिखाया है –

जली ठूंठ पर बैठकर गयी कोकिला कूक

बाल न बाँका कर सकी शासन की बंदूक।[x]

नागार्जुन इस मामले में एक विलक्षण कवि हैं कि वे कविता के शास्त्रीय पैमानों की भी समझ रखते हैं और जनता का कवि होने की जरूरत की भी। इसलिए लोकप्रियता और कलात्मक सौन्दर्य का अद्भुत समन्वय उनके काव्य संसार में मौजूद है। कवि नागार्जुन की पैठ जितनी साहित्यिक हलकों और अकादमिक जगत में है उतनी ही जनसामान्य के बीच भी। आलोचक रामविलास शर्मा कवि नागार्जुन के इस पक्ष पर लिखते हैं – "हर विकासमान देश के समाजवादी आन्दोलन के सामने यह समस्या आती है कि साहित्य को कैसे लोकप्रिय बनाया जाये, साथ ही उसे कलात्मक स्तर से

गिरने न दिया जाये। नागार्जुन ने लोकप्रियता और कलात्मक सौन्दर्य के संतुलन और सामंजस्य की समस्या को जितनी सफलता से हल किया है, उतनी सफलता से बहुत कम कवि – 'हिंदी से भिन्न भाषाओं में भी' हल कर पाये हैं।"[xi] आगे वे संभावना व्यक्त करते हैं कि देश में जब समाजवाद आएगा, तब लोगों के सामने लोकप्रियता और कलात्मक सौंदर्य के बीच सामंजस्य बिठाने में फिर समस्या आएगी, ऐसे में नागार्जुन ही इस समस्या का समाधान होंगे।

नागार्जुन ने जिस खूबसूरती से तात्कालिक विषयों पर कविताएं लिखी हैं उसी खूबसूरती से उन्होंने सौन्दर्यात्मकभावात्मक कविताएं भी लिखी हैं। ऐसी कविताओं की फेहरिस्त भी लम्बी है। 'सिंदूर तिलकित भाल', 'यह तुम थीं', 'गुलाबी चूड़ियाँ', 'बादल को घिरते देखा है' आदि उनकी ऐसी ही कविताएँ हैं। केदारनाथ सिंह लिखते हैं, "नागार्जुन ने अपनी एक कविता में स्वयं को 'तरल आवेगों वाला ह्रदयधर्मी जनकवि' कहा है। ..उनकी प्रकृति और प्रेम पर लिखी हुई कविताओं में वह बुनियादी भावुकता अपने सर्वोत्तम रूप में मौजूद है, जो समकालीन कविताओं से लगभग गायब हो गई है।"[xii] 'तरल आवेगों वाला ह्रदयधर्मी जनकवि' : इस पद में नागार्जुन ने अपने अंदर के कवि को एकदम सटीक रूप से परिभाषित कर दिया है। एक ऐसा जनकवि जो अपने आस पास दुनिया की लीला को देखते ही भाव विभोर हो उठता है, उसकी कलम ह्रदय के आवेगों से संचालित होती हुई अनथक चल पड़ती है। लेकिन इस कविता में किसी तरह का संभ्रांतपना नहीं है, कविता आदि से अंत तक आमजन की की चेतना से जुड़ी हुई है।

आमतौर पर यह माना जाता है कि प्रगतिशील साहित्य सामाजिक और आर्थिक संबंधों को ध्यान में रख कर ही लिखा जाता है और कलावादी साहित्य का सामाजिक चीजों से से कोई लेना देना नहीं है। यह मार्क्सवादी और कलावादी साहित्य की बड़ी स्थूल और सतही व्याख्या है। मार्क्सवादी आलोचक रामविलास शर्मा इस मान्यता को गलत बताते हुए कहते हैं, "भारत क्या और क्या यूरुप – कहीं भी अब तक कोई बड़ा मानव प्रेमी नहीं हुआ जो प्रकृति का प्रेमी भी ना रहा हो। केवल यांत्रिक भौतिकवाद के लिए यह प्रेम मूल्य हीन है द्वंद्वात्मक भौतिकवाद के लिए नहीं। इसलिए हम नागार्जुन की कविता में देखते हैं कि जब कंकालों के चीत्कारों के दमन पर सत्ता की बंदूक आकाश में छा जाती है तो उसे ठेंगा दिखाने के लिए एक कोयल ही कूकती है, कोयल का कूकना एक प्रतीक है प्रकृति की जिजीविषा और मानवीय प्रेम का जो हिंसा और दमन के खिलाफ अपनी लघु लेकिन सशक्त आवाज़ बुलंद करती है। इसलिए सुदूर देश में भी जब नागार्जुन को अपने घर और अपनी मिट्टी की याद आती है तो उन्हें पत्नी का 'सिंदूर तिलकित भाल' और चन्दन रूपी गांव की पगडंडियों की धूल याद आती है। यहाँ सहज रूप में पाब्लो नेरुदा की कविताएँ याद आती हैं जो घोषित रूप से मार्क्सवादी आन्दोलनकारी और कवि थे लेकिन प्रकृति और प्रेम पर जैसी कविताएँ उन्होंने लिखी हैं, वो दुर्लभ हैं। नागार्जुन की कविताएँ भी नेरुदा की कविताओं की भांति ही बतलाती हैं कि जनवादी या मार्क्सवादी होना मशीनी होना नहीं है बल्कि मानवीय होना है और जो मानवीय होगा उसके ह्रदय में नैसर्गिक प्रेम और सौन्दर्य की सृष्टि होगी ही।

नागार्जुन की काव्य कला एक अन्य स्तर पर जाकर बाकी कवियों से भिन्न हो जाती है और उनके काव्य व्यक्तित्व को विराटता प्रदान करती है। यह है – कविता का विषय। नागार्जुन संभवत: शायद हिंदी के इकलौते कवि हैं जिनकी कविता का फलक इतना विशाल है। वह रिक्शेवाले की फटी बिवाईयों पर भी कविता लिखते हैं और आसमान पर गहराते घने बादलों को देखकर भी कविता लिखते हैं। वे 'लेनिन स्त्रोत्रं' जैस कविता भी लिखते हैं तो सूअर और नेवले तक पर कविता लिख डालते हैं। इतने से भी मन नहीं भरता तो पके हुए कटहल पर भी। यहाँ नागार्जुन की उस उक्ति का पुन: स्मरण हो आता है जिसमें वह खुद को 'तरल आवेगों वाला ह्रदयधर्मी जनकवि' कहते हैं। उनके ह्रदय के तरल आवेग उन्हें कब कहाँ किस वस्तु पर कविता लिखने ककको प्रेरित कर दें, कल्पना करना मुश्किल है। बिना किसी की परवाह किए नागार्जुन ही कविता में ऐसी पंक्ति पूरी गंभीरता से लिख सकते हैं – "फैल गया है दिव्य मूत्र का लवण

सरोवर" या "एक दूसरे का गुह्य अंग सूंघ रहे हैं"। नामवर सिंह नागार्जुन की इन कविताओं के संदर्भ में कहते हैं, "जो वस्तु औरों की संवेदना को अछूती छोड़ जाती है वही नागार्जुन के कवित्व की रचना भूमि है।"[xiii]

नागार्जुन की कविता में मौजूद व्यंग्य का जो स्वरूप है वह भी उन्हें अपनी समकालीनों या कहें कि आधुनिक हिंदी कविता के सभी कवियों से अलग करता है। नामवर सिंह का मानना है कि कबीर के बाद हिंदी कविता में नागार्जुन से बड़ा व्यंग्यकार पैदा नहीं हुआ। नागार्जुन की एक कविता है जिसमें वह खुद पर ही हँसते हैं – "यह बनमानुष/ यह 70 साला उजबक / उमंग में भरकर सिर के बाल / नोचने लग जाता है / अकेले में बजाने लगता है सीटियां / आए दिन.." नामवर सिंह की इस पर टिपण्णी है, "जो कवि अपने प्रति इतना निर्मम है उसे दूसरों के प्रति भी निर्मम होने का पूरा अधिकार है।"[xiv] 'खुरदरे पैर' कविता में जब वे लिखते हैं – 'भूल नहीं पाऊंगा फटी बिवाईयाँ / खुब गई दूधिया निगाहों में / धँस गई कुसुम कोमल मन में..' तो स्वयं के लिए दूधिया निगाह और कुसुम कोमल मन लिख लिख कर भी खुद पर व्यंग ही कर रहे होते हैं। खुद का ही उपहास कर रहे होते हैं। आत्मोपहास की यह कला नागार्जुन के यहां ही है।

इस तरह नागार्जुन की कविताओं में भारी विविधता है। उनमें नारेबाजी है, राजनीतिक कविताएँ हैं, प्रकृति प्रेम है, गाँव–जवार और अपनी मिट्टी की याद है, पत्नी के प्रति भावपूर्ण समर्पण है, गरीब–दमित वर्ग के प्रति सहानुभूति है तो व्यवस्था और समाज पर भारी व्यंग्य करती हुई कविताएँ भी हैं। यथार्थवादी होते हुए भी काव्य के सौन्दर्य को कहीं उन्होंने कम नहीं पड़ने दिया है। वे पाठकों के भी कवि है और अकादमिक जगत के आलोचकों को भी चकित करते हैं। उनकी कविताएँ मनुष्य जीवन की विराट चेतना की कविताएँ हैं जिसमें जीवन का शायद ही कोई रंग छूटा हो। जीवन के हरेक पहलू से वे होकर गुजरे हैं और इन सबको अपनी रचनाओं में उन्होंने जगह दी है।

संदर्भ सूची :

[i]. रामविलास शर्मा, 2018, नई कविता और अस्तित्ववाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ – 141

[ii].नागार्जुन, 2009, प्रतिनिधि कविताएँ, (सं. नामवर सिंह), राजकमल पेपरबैक्स, नई दिल्ली, पृष्ठ – 36

[iii]. रामविलास शर्मा, वही, पृष्ठ – 141

[iv]. नागार्जुन, kavitakosh।org/kk/इन्दुजीक्याहुआआपको/नागार्जुन

[v]. नागार्जुन, वही, पृष्ठ – 63

[vi]. केदारनाथ सिंह, 2016, मेरे समय के शब्द, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ – 57

[vii]. अजय तिवारी, 2005, नागार्जुन की कविता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ – 173

[viii]. नागार्जुन, 2009, पृष्ठ – 101

[ix]. नागार्जुन, 2009, पृष्ठ – 104

[x]. नागार्जुन, 2009, पृष्ठ – 105

[xi]. रामविलास शर्मा, वही, पृष्ठ – 141

[xii]. केदारनाथ सिंह, वही, पृष्ठ – 59

[xiii]. नामवर सिंह, 2009, भूमिका, नागार्जुन:प्रतिनिधि कविताएँ, (सं. नामवर सिंह), राजकमल पेपरबैक्स, नई दिल्ली, पृष्ठ – 5

[xiv]. नामवर सिंह, वही, पृष्ठ – 8